जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

निज भगवान आत्मा की आराधना ही वास्तविक धर्म है; क्योंकि निज भगवान आत्मा की आराधना का नाम ही सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र है।

ह्न बारह भावना अनुशीलन, पृष्ठ : 168

वर्ष : 29, अंक : 9 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये
अगस्त (प्रथम), 2006 प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

२९ वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 23 जुलाई से 1 अगस्त, 2006 तक आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया ।

इस 29 वें शिविर का उद्घाटन समारोह दिनांक 23 जुलाई, 2006 को हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री विमलकुमारजी जैन, नीरु केमिकल्स दिल्ली ने की। इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर, डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी आदि अनेक विद्वान, विशिष्ट अतिथि एवं साधर्मीजन उपस्थित थे।

शिविर का उद्घाटन श्री प्रेमचन्दजी बजाज कोटा ने तथा शिविर मण्डप का उद्घाटन श्री निहालचन्दजी जैन (ओसवाल इण्डस्ट्रीज) जयपुर द्वारा किया गया। ध्वजारोहण श्री नरेशकुमारजी मगनलालजी दोशी, कोचीन द्वारा किया गया।

मंचासीन उपरोक्त समस्त अतिथियों का तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट के ट्रस्टी श्री सुमनभाई दोशी राजकोट एवं श्री अमृतभाई मेहता फतेपुर ने तिलक लगाकर, माल्यार्पण से स्वागत किया। कार्यक्रम का संचालन ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री ने किया ।

शिविर में प्रतिदिन आध्यात्मिक सत्पुरुष गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के टेप व सी. डी. प्रवचन के अतिरिक्त आध्या. प्रवक्ता बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' कोटा के नियमसार, अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर के समयसार एवं प्रसिद्ध विद्वान डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी के मोक्षमार्गप्रकाशक एवं समयसार पर मार्मिक प्रवचन हुये। पण्डित अनिलजी भिण्ड के प्रवचन का लाभ भी मिला।

शिविर में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर द्वारा सम्यक्त्व सन्मुख मिथ्यादृष्टि प्रकरण, ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद द्वारा छहढाला, ब्र. यशपालजी जैन बेलगांव द्वारा मिश्रभाव, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर द्वारा चार अभाव, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन द्वारा 47 शक्तियाँ, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा परमभाव प्रकाशक नयचक्र, पण्डित मनीषकुमारजी शास्त्री रहली द्वारा तत्त्वार्थसूत्र विषय पर विशेष कक्षाये संचालित की गई।

शिक्षण-शिविर के आमंत्रणकर्त्ता स्व. श्री राजमलजी पाटनी की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रतनदेवी व सुपुत्र श्री अशोक पाटनी कोलकाता, श्री लखमीचन्दजी शिखरचन्दजी जैन, विदिशा, डॉ. अरविन्दभाई दोशी गोंडल एवं श्री चिद्रूप-दिलीप शाह मुम्बई थे।

शिविर के अवसर पर आयोजित श्री सिद्ध परमेष्ठी विधान के आयोजनकर्त्ता श्री बाबूलालजी सुखलालजी पंचोली थांदला, श्री सिद्धार्थकुमारजी दोशी रतलाम, श्री गोपीलालजी श्री बाबूलालजी जैन कुम्भराज-गुना, श्री सरदारमलजी जैन बैरसिया-भोपाल एवं श्री अनिलकुमारजी जैन हिसार थे।

दिनांक 30 जुलाई को श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट की सलाहकार समिति का अधिवेशन की अध्यक्षता बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' ने की। अधिवेशन का उद्घाटन श्री प्रदीपकुमारजी चौधरी किशनगढ़ ने कया।

शिविर में साधर्मी जनों की आशातीत उपस्थिति रही। लगभग 1800 मुमुक्षु भाई-बहिनों ने लगभग 17 घण्टे प्रतिदिन चलनेवाली तत्त्वज्ञान की अविरलधारा से अपने जीवन को सफल किया।

इस शिविर में विशेषता यह रही कि महाविद्यालय के पूर्व स्नातक जो डॉक्टरेट (पीएच. डी.) की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं, उनके दोपहर एवं रात्रि में उनके द्वारा किये गये शोध विषय पर ही व्याख्यान हुए, जिसमें डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री उदयपुर, डॉ. श्रीयांसकुमारजी सिंघई जयपुर, डॉ. दीपकजी जैन जयपुर, डॉ. नरेन्द्रकुमारजी जैन जयपुर, डॉ. योगेशकुमारजी जैन अलीगंज, डॉ. वीरसागरजी जैन दिल्ली, डॉ. सुदीपकुमारजी दिल्ली, डॉ. राकेशजी जैन अलीगढ का लाभ मिला।

जयपुर शिविर 28 सितम्बर से 7 अक्टूबर 2006 तक

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर द्वारा प्रतिवर्ष दशहरे के अवसर पर लगनेवाले शिविर की तिथि पूर्व में 1 अक्टूबर से 10 अक्टूबर, 2006 तक निश्चित की गई थी; किन्तु अब यह शिविर **गुरुवार, दिनांक 28 सितम्बर से शनिवार, 7 अक्टूबर 2006** तक लगना निश्चित किया गया है ।

अत: समस्त साधर्मी भाई बहिनों को **तिथि का ध्यान रखते हुये** शिक्षण शिविर में पधारने का भावभीना आमंत्रण है।

सम्पादकीय –

ये तो सोचा ही नहीं

ह्व रतनचन्द भारिल्ल

१०. विचित्र संयोग : पुण्य-पाप का

धनश्री की छोटी बहिन रूपश्री रूप लावण्य में अद्वितीय थी। मृगी के नयनों की भाँति बड़े-बड़े काले-कजरारे नेत्र, शुक के समान नुकीली नाक, जवाकुसुम जैसे रक्तवर्ण अधर-ओष्ठ, मोतियों-सी श्वेत दन्तपंक्ति, इकहरी कंचनवर्णी काया, नितम्बों तक लटकती काली-घुंघराली केशराशि, निष्कलंक चमकता-दमकता मुख-मण्डल, जिसे देख शशि भी शरमा जाये।

जहाँ एक ओर रूपश्री का बाह्य व्यक्तित्व इतना मनमोहक था, वहीं दूसरी ओर वह मानसिक दृष्टि से बहुत कमजोर थी। किसी अज्ञात आशंका से वह रो पड़ती थी।

यह कैसा विचित्र संयोग है पुण्य-पाप का ? **यह रूप-लावण्य सचमुच कोई गर्व करने जैसी चीज नहीं है। इतना और ऐसा पुण्य तो पशु-पक्षी भी कमा लेते हैं, फुलवारियों के फूल भी कमा लेते हैं, वे भी देखने में बहुत सुन्दर और प्रिय लगते हैं; पर कितने सुखी हैं वे?**

बेचारी रूपश्री के बाल्यकाल से ही ऐसे पाप का उदय था कि वह बचपन में न जाने क्यों बात-बात में रो देती थी और घंटों रोया करती। रोने से उसकी आँखें लाल-लाल हो जातीं, गला रुँध जाता, मुख-मण्डल श्रीविहीन हो जाता।

माँ से उसका इस तरह रोना देखा नहीं जाता था। बेटी के दु:ख से वह भी भारी दु:खी हो जाती। पिता को पहले तो अपने काम-धंधों से ही फुरसत नहीं, फिर पियक्कड़ और स्वभाव से ही लापरवाह भी। वह क्या समझें संतान के प्रति अपने उत्तरदायित्व को, कर्तव्य को ?

माँ कभी-कभी झुंझलाकर कहती ह्व ''शायद इसके भाग्य में तो रोना ही लिखा है। कैसी बड़ी-बड़ी आँखे हैं, परन्तु लगता है रो-रोकर यह अपनी आँखे और सेहत दोनों खराब कर लेगी।''

रूपश्री का पिता अपनी पत्नी को परेशानी में देख कभी-कभार दिलासा देता हुआ कहता ह्व'' बच्चे हैं, कभी रोते हैं तो कभी हँसते हैं। बच्चों का तो स्वभाव ही ऐसा होता है। बड़ी होने पर सब ठीक हो जायेगा।''

उस नादान बालिका को यह पता नहीं था कि मेरा यह रोना और दु:खी होना पूर्व पाप का फल तो है ही, नये पाप बंध का कारण भी है, रोने में जो संक्लेश होता है, जो दूसरों पर द्वेष भाव होता है, वह पाप बंध का कारण बनता है। इसप्रकार दु:ख का बीज नि:संदेह भविष्य में वट वृक्ष की तरह बड़ा होकर दु:ख के फल देता है।

उस नन्हीं-सी बच्ची की क्या बात कहें ? यह तो अपने को समझदार समझनेवाले हमें-तुम्हें भी पता नहीं है कि हम अनजाने में दूसरों के प्रति राग-द्वेष करके कैसे-कैसे पाप भाव करते रहते हैं।

ध्यान रहे, किसी को अपने पाप भावों का पता हो या न हो, दूसरों को भी भले पता चले या न चले; पर कर्मबन्धन से कोई नहीं बच सकता। कर्म का बन्धन तो सबको अपने-अपने मोह-राग-द्वेष भावों के अनुसार होता ही है, कर्मों का और रागादि भावों का परस्पर चुम्बक और लोहे की भाँति ऐसा ही सहज सम्बन्ध है।

चाहे बालक हो या वृद्ध, नर हो या नारी, पुण्य-पापकर्म तो सबको अज्ञान और कषायों के अनुसार एक जैसे ही बंधते हैं। ये किसी की उम्र का कोई लिहाज नहीं करते और न गैरसमझदार पर कृपा ही करते हैं। ये कषायों की हीनाधिकता के अनुसार समय-समय पर सबको अपना फल भी देते ही हैं। इसीलिए बाल्यकाल से ही यह जानकारी होना जरूरी है कि **कैसे-कैसे पुण्य-पाप परिणामों या शुभ-अशुभ भावों से किसप्रकार का कर्मबंध होता है और उनका क्या फल होता है ?**

जैसे धनार्जन के काम में घाटे-मुनाफे का पता लगाने के लिए लेन-देन, आवक-जावक, आय-व्यय का लेखा-जोखा जरूरी होता है; उसीप्रकार पुण्य-पाप के परिणामों या भावों का सही लेखा-जोखा भी जरूरी है। अन्यथा जैसे धंधे में लापरवाही से दिवाला निकल जाता है; उसीप्रकार धर्म के क्षेत्र में धर्म-अधर्म या पुण्य-पाप की पहचान न होने से धर्म-अधर्म के न पहचानने के कारण पापाचरण के फलस्वरूप अधोगति में ही जाना पड़ता है।

ज्ञानेश इस बात से भली-भाँति परिचित है। अत: उसका सोच यह है कि ह्व ''धनेश की पत्नी धनश्री और उसकी छोटी बहिन रूपश्री, जो दिन-रात दु:खी रहने से दु:ख के बीज बोती रहतीं हैं; उन्हें सत्य का ज्ञान कराना अत्यन्त आवश्यक है। अभी उन्हें क्या पता कि पहले कभी मोहवश ऐसी ही खोटी परिणति या पाप भाव रहा होगा, जिसका फल वे अभी भोग रहीं हैं और अब यदि इसी स्थिति में यह दुर्लभ मनुष्य भव बीत गया तो अनन्त काल तक इसी भवसागर में गोते खाने पड़ेंगे। अत: उन्हें एकबार तो सन्मार्ग दिखाना ही होगा। मानें या न मानें, मैं अपना काम तो क रूँगा ही।'' इस संकल्प के साथ ज्ञानेश उन्हें सन्मार्ग-दर्शन कराने की योजना बनाने में जुट गया।

जहाँ एक ओर रूपश्री का सुरांगना के समान प्रकृति प्रदत्त रूप-लावण्य, वहीं दूसरी ओर दयनीय, दु:खद प्रतिकूल पारिवारिक परिस्थितियाँ; जिन्हें देख दानवों के दुष्ट हृदय भी द्रवित हो जायें।

कैसा विचित्र खेल है इन पूर्वोपार्जित कर्मों का ? परन्तु यह कोई नई बात नहीं है। पुराणपुरुष कोटिभट राजा श्रीपाल इसके साक्षी हैं। जहाँ एक ओर वे करोड़ योद्धाओं के बराबर बल के धारक; वहीं दूसरी ओर उनका कुष्ठरोग से पीड़ित होना और राज-पाट से निष्काषित होकर निर्जन जंगलों में भटकना और दर-दर की ठोकरें खाना। क्या उनके शुभाशुभ कर्मों की विचित्रता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है?

यहाँ सीखने की बात यह है कि 'यदि हम रूपश्री की भाँति रोते-रोते दु:खद जीवन नहीं जीना चाहते, दु:ख नहीं भोगना चाहते हैं तो हम हँसते-हँसते अपने ऐश-आराम के लिए दूसरों के जीवन से खिलवाड़ न करें, हिंसा-झूठ-चोरी आदि पाप कार्य न करें।'

सर्वगुण-सम्पन्न होतेहुए भी रूपश्री का बाल्यकाल तो रोते-रोते बीता ही है, यौवन भी आशा-निराशा के झूले में झूलते रहने से व्याकुलता में ही बीत रहा है। यह भी उसके पाप कर्मों का ही फल है।

पीढ़ियों से धनाढ्य होने पर भी दुर्व्यसनों में लिप्त हो जाने से अभावों के गहरे गर्त में पड़ा पिता; सब ओर से पीड़ादायक अनिष्ट संयोगों से घिरी बड़ी बहिन धनश्री; जिसका कोई भविष्य नहीं ह्व ऐसा नाबालिग छोटा भाई। ऐसी

प्रतिकूल परिस्थितियों में रूपश्री का न कोई संरक्षक, न कोई सहारा। ध्यान रहे, ऐसे संयोग भी पाप कर्मके फल में ही तो मिलते हैं।

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी की उक्ति को याद कर-करके आहें भरती रूपश्री सशंक भयभीत मृगी की भाँति अपना आश्रय खोजती यत्र-तत्र भटकती हुई अपने दुर्दिन बिता रही थी।

जब पहले किया पाप का फल सामने आता है तब परिस्थिति बदलते देर नहीं लगती। जो अपने गौरव के हेतु होते हैं, सुख के निमित्त होते हैं; वे ही गले के फन्दे बन जाते हैं।

रूपश्री का शारीरिक सौन्दर्य, जिसपर उसके माता-पिता एवं कुटुम्ब-परिवार को गर्व था, आज वही सौन्दर्य उसके लिए धर्मसंकट बन गया है।

दुर्व्यसनों के कारण पिता की सामाजिक प्रतिष्ठा धूलि-धूसरित एवं प्रभाव क्षीण हो जाने से असामाजिक तत्त्वों की पड़ती काली छाया और गिद्धदृष्टि की शिकार हो जाने की आशंका से रूपश्री सशंक और भयातुर भी रहने लगी थी। अपने शील की सुरक्षा में सतत् सावधान रूपश्री अपने सौभाग्य की प्रतीक्षा कर रही थी।

वह सोचती ह्न लड़कों ने तो जिस कुल में जन्म ले लिया, उन्हें पूरा जीवन वहीं बिताना पड़ता है; पर लड़कियाँ इस मामले में सौभाग्यशालिनी होतीं हैं। उन्हें जीवन में दो बार भाग्योदय का अवसर प्राप्त होता है। एक बार तो तब, जब वह किसी बड़े घर में जन्म लेकर बड़े बाप की बेटी बनती है। कदाचित् दुर्भाग्यवश किसी साधारण घर में जन्म लेना पड़ गया तो पुन:दूसरा भाग्योदय का अवसर उसे तब मिलता है, जब उसकी शादी होती है, वह किसी बड़े घर की बहू बनती है।

मेरा पहला अवसर तो यों ही चला गया। बड़े घर में जन्म लेने के बावजूद मुझे उसका लाभ नहीं मिल पाया। मेरे जन्म लेने के साथ ही मेरे पिताश्री कुसंगति में पड़ गये। धीरे-धीरे एक-एक दुर्व्यसन से घिरते चले गये और अपने ही लक्षणों से बीस वर्ष के अन्दर ही स्वर्ग जैसे सदन के निवासी सड़क पर आकर खड़े हो गये।

अब दूसरा अवसर शेष है। पर यह आशा भी दुराशा मात्र लगती है। इसमें भी अधिकांश तो निराशा ही हाथ में आनेवाली है; क्योंकि **दहेज दानव इस संभावना पर भी संभवत: पानी फेर देगा।**

रूपश्री का यह सोचना गलत भी नहीं है; क्योंकि भले ही वह सुन्दर है, पर उसकी सुन्दरता से न तो श्रीमन्तों का पेट भरता है और न पेटी ही। दूसरे, लक्ष्मीवालों की प्रतिष्ठा का प्रश्न भी तो आड़े आ जाता है।

सैंकड़ों रिश्ते आये, पर इन्हीं सब कारणों से अब तक कहीं भी पार नहीं पड़ी, बात नहीं बनी। सभी का यही कहना था ह्न लड़की सुन्दर है, विनयवान भी है, यह बात तो सर्वोत्तम है; परन्तु...।

बार-बार योग्य-अयोग्य सभी तरह के व्यक्तियों के सामने अपना प्रदर्शन करते और बेतुके, बनावटी, ऊँट-पटांग प्रश्नों के उत्तर देते-देते तथा अपमान के घूँट पीते-पीते बेचारी रूपश्री इतनी ऊब गई थी कि उसे अब ऐसे दु:खद जीने से मरना सुखद लगने लगा था। पर पता नहीं, क्या सोच-सोचकर वह अपनी जीवित लाश को ढो रही थी।

उसने एक बार प्रवचन में सुना था कि ह्न ''**आत्मघाती महापापी ह्न आत्मघात करनेवाला महापापी होता है। आत्मघात करनेवाले की सुगति नहीं होती, कुगति ही होती है;** इसीकारण उसने निश्चय कर लिया कि 'जो पूर्व जन्म में मैंने पाप कर्म किए होंगे, उन्हें भोगना तो पड़ेगा ही; फिर इसी जन्म में ही क्यों न भोग लिये जायें ? बे-मौत मरने से ये कर्म मेरा पीछा छोड़ने वाले तो हैं नहीं। अत: **भला-बुरा जो भी हो रहा है, उसे मात्र जानते-देखते चलो। उसमें तन्मय मत होओ।**'' यही सब तो सुना था उस दिन प्रवचन में।

कहते हैं -**घूरे के भी दिन फिरते हैं** तथा **आशा से आसमान टिका है। खुरपी को भी टेढ़ा बैंट तो मिलता ही है।** इसी आशावादी दृष्टिकोण से और आत्महत्या के पाप के भय ने रूपश्री को आत्मघात करने से बचा लिया।

जिसप्रकार पाँचों उंगलियाँ एक जैसी नहीं होतीं; उसीप्रकार सभी व्यक्ति भी एक जैसे नहीं होते। एक युवक ऐसा भी था, जो पढ़ा-लिखा, प्रतिभाशाली, देखने-दिखाने में आकर्षक व्यक्तित्व का धनी और अमानवीय दोषों से कोसों दूर था। धन की चाह और जरूरत किसे नहीं होती ? परन्तु किसी की मजबूरी का अनुचित लाभ उठाना उसकी वृत्ति में नहीं था। प्रथम परिचय में ही वह रूपश्री के बाह्य व्यक्तित्व से आकर्षित हो गया। धीरे-धीरे परिचय प्रीति में बदल गया। वह रूपश्री की सरलता, सज्जनता तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में सहनशीलता तथा विनयशीलता जैसे गुणों से अधिक प्रभावित था। इन्हीं सब कारणों से वह उसके मन में बस गई थी।

यदि वह चाहता तो किसी भी बड़े घर से उसे भी दो-चार लाख मिलना कोई बड़ी बात नहीं थी; पर यह उसके खून में ही नहीं था। रूपश्री भी उसे देखते ही, अनजाने में ही उसकी ओर सहज आकर्षित होती चली गयी, मानो उसके साथ उसका जन्म-जन्म का रिश्ता हो।

नवयुवक के पिता ने भी अन्तर्जातीय संबंध होते हुए भी बेटे रूपेश की भावनाओं को पहचान कर कुटुम्ब परिवार की असहमति और अन्तर्जातीय संबंध के विरोध की भी परवाह न करके रूपश्री को अपने घर की बहू बना लिया।

रूपेश का बाह्य व्यक्तित्व तो रूपवान था ही, वह सदाचारी और धन-सम्पन्न भी था। रूपेश जैसे पति को पाकर रूपश्री मन ही मन प्रसन्न हो रही थी; पर अचानक उसके जाग्रत मानस पटल पर बचपन की अर्द्ध जाग्रत मानस पर पड़ी वह स्मृति-रेखा उभर आई, जब खेल-खेल में उसका गुड्डा क्षतिग्रस्त कर दिया गया था। इसकारण उसका मन कुछ-कुछ खिन्न हो गया। तत्काल उसने अपने मन को समझाया ''वह तो गुड्डे-गुड्डियों का खेल था, खेलों में तो ऐसा होता ही है, उसमें खिन्न होने की क्या बात है।'' यह सोचकर वह संभल गई। यद्यपि उस समय वह खूब रोई थी; क्योंकि तब लड़कपन जो था। उस समय वह खेल को ही सचमुच की शादी समझती थी, इसकारण उस समय उसका रोना स्वाभाविक ही था। दूल्हा दुर्घटनाग्रस्त हो जाये और दुल्हन की आँख में आँसू भी न आयें ह्न ऐसा कैसे हो सकता था ?

रूपेश तो स्वभाव से ही धार्मिक प्रवृत्ति का था, रूपश्री भी सरलस्वभावी थी, भारतीय नारी के सभी गुण उसमें थे। पति की परछाँई बनकर रहना ही वह अपना धर्म समझती थी।

रूपेश ने सलाह के रूप में रूपश्री से कहा- गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने के पूर्व सर्वप्रथम किसी ऐसे तीर्थ की वंदनार्थ जाने का कार्यक्रम क्यों न बनाया जाये, जिसमें 'एक पंथ दो काज' हो जायें ? तीर्थवंदना भी हो जाये और साथ में घूमना-फिरना भी जिसे आज की भाषा में लोग हनीमून कहते हैं।

रूपश्री ने रूपेश की बात का समर्थन करते हुए कहा मैं आपकी इस सलाह से पूर्ण सहमत हूँ। आपका विचार उत्तम है। 'हनीमून' के नाम पर कोरे आमोद-प्रमोद और सैर-सपाटे से क्या लाभ ? और हनीमून का प्रयोजन और उद्देश्य भी शादी के बाद प्रथम परिचय को प्रगाढ़ करने और परस्पर के संकोच को, झिझक को मिटाना होता है। तीर्थयात्रा में भी वह सब संभव है।

रूपेश मुस्कराया और बोला ह्न ''लोग क्या कहेंगे ?''

रूपश्री ने रूपेश के संकोच को दूर करते हुए कहा ह्न ''अरे ! कहनेवालों का क्या ? जो जिसके मन में आये, कहता रहे। हम किसी के कहने की परवाह क्यों करें ? हम कोई गलत काम करने को तो जा नहीं रहे, जो ऐसा संकोच करें। धर्म साधना करने की कोई निश्चित उम्र नहीं होती। धर्म तो जीवन का अभिन्न अंग होना चाहिए। क्या पता कब/क्या हो जाये ? अंत में धर्म ही तो हमारा सच्चा साथी है।''

रूपश्री की ऐसी समझदारी की बात सुनकर रूपेश मन ही मन बहुत खुश हुआ। उसे लगा कि रूपश्री सच्ची भारतीय धर्मपत्नी है, तभी तो धर्म कार्यों में साथ दे रही है।

इसके लिए उन्होंने दक्षिण भारत की यात्रा पर जाने का निश्चय कर लिया। एक सप्ताह की तीर्थयात्रा सानन्द सम्पन्न हुई। वहाँ से लौटते समय धर्मस्थल से नीची-ऊँची घाटियों का आनन्द लेते हुए चारों ओर हरे-भरे दृश्यों को देखते हुए धार्मिक गीत गुनगुनाते कार में बैठे मस्ती से आ रहे थे कि अचानक कार का ब्रेक फेल हो गया। ड्राइवर ने कार संभालने की काफी कोशिश की, पर कार काबू से बाहर हो गई, आउट ऑफ कन्ट्रोल हो गई। उनकी समझ में आ गया कि अब तो भगवान का नाम लेने के सिवाय दूसरा कोई उपाय ही नहीं है।

रूपेश को अचानक रूपश्री का यह वाक्य स्मरण हो आया कि ह्न **धर्म करने की उम्र कोई निश्चित नहीं होती, धर्म तो हमारे जीवन का अभिन्न अंग होना चाहिए।** क्या पता कब/क्या हो जाये ? बस तुरन्त सावधान होकर ध्यानमुद्रा में दोनों मन ही मन आत्मा-परमात्मा के स्वरूप का स्मरण करने लगे।

देखते ही देखते कार वृक्षों से टकराती बल खाती एक गहरे गर्त में गिरने ही वाली थी कि उसका एक फाटक खुल गया और रूपश्री वृक्ष की डाल में अटक गयी और बाल-बाल बच गई। उधर गाड़ी गर्त में गिरने से रूपेश के उसी समय प्राण-पखेरू उड़ गये।

होनहार की बात है कि एक ही सीट पर एक साथ बैठे युगल दम्पत्ति रूपश्री और रूपेश में रूपश्री साधारण-सी चोट खाकर बच गई और रूपेश का गिरना-मरना एक ही साथ हो गया। **यह भी कर्मों की कैसी विचित्रता है ? जिसकी आयु शेष है, उसे कोई मार नहीं सकता तथा जिसकी आयु के क्षण समाप्त हो गये हैं, उसे कोई बचा नहीं सकता।**

रूपश्री के दुर्भाग्य का अभी अन्त नहीं आया था। तभी तो इतना सुन्दर संबंध मिलने पर भी उसके भाग्य में पति का सुख नहीं था। शादी हुए चंद दिन ही हुए थे कि उसके प्राणों से प्यारे पति का इस दु:खद दुर्घटना में देहावसान हो गया और रूपश्री जीवन भर के लिए अनाथ हो गई। इसीलिए तो कहा गया है कि **भूल कर भी हम ऐसा आर्तध्यान और पापाचरण न करें, जिसका ऐसा दु:खद नतीजा हो।** ●●●

शिक्षण शिविर सानन्द सम्पन्न

1. रावतभाटा (राज.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन समाज के तत्त्वावधान में दिनांक 11जून से 17 जून तक बाल संस्कार एवं व्यक्तित्व विकास शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर में पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित आशीषजी शास्त्री टीकमगढ एवं पण्डित प्रियंकजी शास्त्री रहली के मार्मिक प्रवचनों का तथा ब्र.चन्द्रसेनजी के सान्निध्य का लाभ मिला। इस अवसर पर श्री170 तीर्थंकर विधान का आयोजन किया गया। **ह्न संजय शास्त्री**

2. कोटा (राज.) : यहाँ श्री दि.जैन बाल विकास पारमार्थिक न्यास के तत्त्वावधान में दि.18 जून से 25 जून तक चौदहवॉं जैन दर्शन एवं व्यक्तित्व विकास शिविर आयोजित किया गया।

इस अवसर पर डॉ. नरेन्द्रजी शास्त्री जयपुर के समयसार एवं बारह भावनाओं पर मार्मिक प्रवचन हुये। पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा ने आर्त-रौद्र ध्यान व वस्तु व्यवस्था की विशेष कक्षा ली।

शिविर में शिशु, बाल, किशोर, युवा एवं प्रौढ वर्ग की विभिन्न कक्षाओं में पण्डित बाबूभाई मेहता फतेपुर, पण्डित खेमचन्दजी शास्त्री उदयपुर, पण्डित ऋषभजी शास्त्री, पण्डित आशीषजी शास्त्री, ब्र. नीलिमाबेन, ब्र.सुमनबेन, श्रीमती आनंदधारा, श्रीमती आशा सौगाणी एवं ध्रुवधाम के विद्यार्थियों का सहयोग रहा। आयोजन में लगभग 600 शिविरार्थियों ने धर्मलाभ लिया। अन्तिम दिन परीक्षायें तथा पुरस्कार वितरण समारोह रखा गया।

शिविर का सफल संयोजन श्री सुशीलजी जैन एवं पण्डित चैतन्यजी शास्त्री ने किया। **ह्न डॉ. मानमल जैन**

3. मेरठ (उ.प्र.) : यहाँ श्री दि. जैन मंदिर तीरगरान में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन एवं श्री जैनधर्म शिक्षा सदन के सहयोग से दिनांक 15 से 22 जून तक जैन संस्कार शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित शाकुलजी शास्त्री द्वारा प्रतिदिन प्रात: एवं सायंकाल छहढाला एवं भक्तामर स्तोत्र की कक्षा ली गई। मंगलार्थी सौधर्म जैन द्वारा बालबोध पाठमाला भाग-3, मंगलार्थी नमन जैन द्वारा बालबोध भाग-2 एवं श्री अजयकुमार जैन द्वारा भाग-1 की कक्षा ली गई। प्रतिदिन प्रात: बालकों को पूजन प्रशिक्षण प्रदान किया गया। **ह्न नवनीत जैन**

4. कारंजा (महा.) : यहाँ श्री महावीर ब्रह्मचर्याश्रम, कंकुबाई श्राविकाश्रम तथा महावीर ज्ञान उपासना समिति द्वारा 2 से 12 जुलाई तक आध्यात्मिक स्वाध्याय शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित धन्यकुमारजी भौंरे, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, पण्डित मनोहरजी मारवडकर, बाल ब्र. पण्डित जीतूभाई चंकेश्वरा, पण्डित कोठाडिया सर, पण्डित आलोकजी शास्त्री, पण्डित चन्द्रकांतजी नांदगांवकर, पण्डित सुरेशजी शास्त्री, पण्डित रविन्द्रजी शास्त्री एवं विदुषी विजयताई भिसीकर आदि विद्वानों का प्रवचनों एवं कक्षाओं के माध्यम से लाभ मिला।

शिविर में लगभग 8 हजार रुपये का सत्साहित्य घर-घर पहुँचा।

5. उदयपुर (राज.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द तत्त्वप्रचार समिति के तत्त्वावधान में श्री दि.जैन चन्द्रप्रभ चैत्यालय, मुखर्जी चौक में दिनांक 12 से18 जुलाई तक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया।

शिविर में पण्डित अश्विनजी शास्त्री नौगामा के प्रात:काल प्रवचनसार के शुद्धभावाधिकार पर एवं रात्रि में लघुतत्त्वस्फोट ग्रन्थ पर प्रवचन हुए।

अष्टान्हिका महापर्व सानन्द सम्पन्न

1. **मेरठ (उ.प्र.) :** यहाँ श्री दिगम्बर जैन मंदिर तीरगरान में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन तथा प्रबन्ध कारिणी कमेटी दिगम्बर जैन बिरादरी द्वारा पर्व के अवसर पर 4 जुलाई से 11 जुलाई तक श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन किया गया।

विधान का निर्देशन एवं सायंकालीन प्रवचन प्रथम चार दिन बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद द्वारा तथा शेष चार दिन बाल ब्र. अभिनन्दनजी शास्त्री खनियांधाना द्वारा किया गया। सह-विधानाचार्य के रूप में पण्डित कांतिकुमारजी नरसिंहपुरा, पण्डित शाकुलजी शास्त्री मेरठ, पण्डित निखिलजी शास्त्री कोतमा, पण्डित अर्पितजी शास्त्री बड़ामलहरा उपस्थित थे।

इस अवसर पर सायंकालीन बाल कक्षाओं के उपरान्त पिड़ावा पार्टी द्वारा जिनेन्द्र भक्ति का आयोजन हुआ। **ह्न नवनीत जैन**

2. **ललितपुर (उ.प्र.) :** यहाँ घंटाघर के पास श्री सीमंधर जिनालयमें पर्व के अवसर पर स्व. वृंदावनलालजी सदैपुरवालों की पुण्यस्मृति में उनके परिवारजनों द्वारा भक्तामर मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित सुरेन्द्रकुमारजी जैन उज्जैन एवं पण्डित भानुकुमारजी के प्रवचनों का लाभ मिला।

विधानाचार्य पण्डित कांतिकुमारजी नरसिंहपुरा, पण्डित राजकुमारजी विदिशा, पण्डित ऋषभकुमारजी शास्त्री ललितपुर थे।

3. **अजमेर (राज.) :** यहाँ श्री वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में श्री सीमंधर जिनालय में पर्व के अवसर पर भक्तामर मण्डल विधान एवं पंचमेरू नन्दीश्वर विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित देवेन्द्रकुमारजी के प्रात: समयसार एवं रात्रि में मोक्षमार्गप्रकाशक के साथ-साथ डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा लिखित पश्चाताप खण्डकाव्य पर मार्मिक प्रवचन हुये।

विधि-विधान के समस्त कार्य ट्रस्ट के मंत्री श्री हीराचन्दजी बोहरा, ट्रस्टी श्री पूनमचन्दजी लुहाड़िया एवं पण्डित अभिनयजी शास्त्री जबलपुर द्वारा सम्पन्न कराये गये। **ह्न विजयकुमार जैन**

4. **रतलाम (म.प्र.) :** यहाँ श्री आदिनाथ चैत्यालय हाथीवाला मंदिर के पास श्री गणधर वलय ऋषि मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पण्डित पदमचन्दजी अजमेरा द्वारा विधान एवं रात्रि में विधान की जयमाला पर मार्मिक प्रवचन हुये।

5. **ग्वालियर (म.प्र.) :** यहाँ चितेरा ओली में श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान का आयोजन किया गया। इस अवसर पर पण्डित चैतन्यजी कोटा, पण्डित पदमचन्दजी कोटा के प्रवचनों का लाभ मिला। विधान के कार्य पण्डित पवनजी शास्त्री मौ ने सम्पन्न कराये। कार्यक्रम का निर्देशन पण्डित शुद्धात्मजी शास्त्री मौ ने किया।

6. **उदयपुर :** यहाँ श्री आदिनाथ दि. जिनमंदिर केशवनगर में पर्व के अवसर पर श्री पंचमेरु नन्दीश्वर विधान का आयोजन किया गया। विधान के कार्य पण्डित अश्विनजी नानावटी ने सम्पन्न कराये। इन्हीं के प्रवचनों का लाभ भी मिला।

7. **खतौली :** यहाँ श्री चन्द्रप्रभ दि. जैन मंदिर पिसनोपाडा में श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान का आयोजन किया गया। विधान के कार्य पण्डित अमितजी शास्त्री लुकवासा ने सम्पन्न कराये तथा इस अवसर पर पण्डित सोनूजी शास्त्री एवं पण्डित प्रशांतजी उकलकर के प्रवचनों का लाभ मिला।

8. **गुना (म.प्र.) :** यहाँ श्री वर्द्धमान जिनमंदिर में अ. भा. जैन युवा एवं महिला फैडरेशन के तत्त्वावधान में पंचमेरु नन्दीश्वर विधान का आयोजन हुआ। इस अवसर पर पण्डित कमलेशजी शास्त्री मौ के प्रवचनों का लाभ मिला तथा विधान के कार्य पण्डित ब्र. नन्हेलालजी सागर ने सम्पन्न कराये।

वर की खोज

एक बार की बात है कि चैतन्य नगर में प्रतिष्ठित सेठ ज्ञानचंद की जिंदगी बढिया फलती फूलती चली जा रही थी; परन्तु अचानक उनको विचार आता है कि मुझे अपनी बेटी श्रद्धा के विवाह हेतु किसी योग्य वर की तलाश करनी चाहिए। वे सोचते हैं कि यदि कोई मुझे सलाह दे तो मेरा कार्य सरल हो जाएगा। अचानक उसीसमय वहां पर उनके अनन्य मित्रों में से एक मित्र व्यवहारजी आते हैं और बताते हैं कि क्या बात है बहुत ही ज्यादा उदास और चिंतामग्न नजर आ रहे हो आखिर बात क्या है ? तब चर्चा के दौरान वे बताते हैं कि मुझे अपनी बेटी के योग्य वर को लेकर चिंता है। तुम्हारी नजर में कोई हो तो बताओ । तभी व्यवहार कहता है कि हाँ है न एक योग्य वर। तो ज्ञानचन्द कहते हैं कि उसका नाम क्या है ? व्यवहारचन्द ने कहा उसका नाम- जीव है । वह करता क्या है ? उसका काम तो ट्यूरिंग जॉब है, कभी तो वह देव में तो कभी नरक निगोद तो कभी तिर्यंच और न जाने कहाँ-कहाँ किस-किस लोक में उसके ऑफिस बने हुए हैं; अत: उससे अच्छा मुझे तो कोई नहीं दिखता और उसका वैभव तो देखो ! चौदह मार्गणा, चौदह गुणस्थान और पाँच इन्द्रियां ह्न इस प्रकार से उसका अनेक प्रकार का वैभव है, उसका परिवार भी बिल्कुल एकदम भरा पूरा है । तब ज्ञानचंदजी कहते हैं कि अच्छा मैं विचार करके बता दूँगा, आपको बहुत-बहुत धन्यवाद । ऐसा कहकर वे अपने-अपने व्यापार में व्यस्त हो जाते हैं । किन्तु इतना सब सुनकर पिताजी घबरा जाते हैं और कहते हैं कि मेरी बेटी श्रद्धा इतनी कोमल अकेली छोटे परिवार और शांत माहौल में पली बडी हुई और इसका तो इतना बडा परिवार ! मैं तो इसके साथ अपनी श्रद्धा का विवाह नहीं करूँगा ह्न ऐसा मन ही मन विचार करते हैं और उसे रिजेक्ट कर देते हैं ।

एक दिन उनको एक और परम मित्र शुद्धनयप्रकाश से मुलाकात हुई तो उनसे वही विवाह विषय पर चर्चा छिड गई और फिर उन्होंने भी एक वर का नाम सुझाया। नाम था भगवानआत्मा । उससे पूछा गया कि वह करता क्या है ? तो कहते हैं कि उसका तो काम एक मात्र आनंद में ही रहना है। वह तो बस परम सुखी है, उसके जैसा तो कोई सुखी ही नहीं दिखता । मुझे तो वही एक मात्र परम सुखी दिखता है; अत: मेरी मानो तो उसे ही अपनी बेटी देने में भला है, शांति है। तब ज्ञानचंदजी विचार करते हैं कि एक तरफ तो भरा पूरा परिवार और वह इतना घूमने फिरनेवाला काम करता है और यह भगवानआत्मा वाला वर तो बहुत ही सुखी है; क्यों न इसके साथ ही अपनी प्यारी बिटिया श्रद्धा का विवाह किया जाए । ऐसे भगवानआत्मा को कि जिसे देखकर सारी पर्यायें अपना सब कुछ उसे ही समर्पित कर देती हैं, चाहे वो चारित्र या अन्य ही क्यों न हों मैं तो भगवानआत्मा को ही अपनी कन्या समर्पित करूँगा, जिसके साथ वह हमेशा सुखी रहेगी। **ह्न जितेन्द्र सिंगोडी**

तत्त्वचर्चा **प्रवचनसार का सार** **56**

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

श्रामण्य के बहिरंग और अंतरग दो लिंगों का उपदेश करनेवाली गाथाएँ इसप्रकार हैं ह्न

जधजादरूवजादं उप्पाडिदकेसमंसुगं सुद्धं।
रहिदं हिंसादीदो अप्पडिकम्मं हवदि लिंगं ।।२०५।।
मुच्छारंभविजुत्तं जुत्तं उवओगजोगसुद्धीहिं।
लिंगं ण परावेक्खं अपुणब्भवकारणं जेण्हं ।।२०६।।

(हरिगीत)

शृंगार अर हिंसा रहित अर केशलुंचन अकिंचन।
यथाजातस्वरूप ही जिनवरकथित बहिर्लिंग है ।।
आरंभ-मूर्छा से रहित पर की अपेक्षा से रहित।
शुध योग अर उपयोग से जिनकथित अंतरलिंग है ।।

जन्मसमय के रूप जैसा रूप वाला, सिर और दाढ़ी-मूँछ के बालों का लोंच किया हुआ, शुद्ध अकिंचन, हिंसादि से रहित और प्रतिकर्म (शारीरिक शृंगार) से रहित ह्न ऐसा श्रामण्य का बहिरंग लिंग है।

मूर्च्छा और आरम्भ रहित, उपयोग और योग की शुद्धि से युक्त तथा पर की अपेक्षा से रहित - ऐसा जिनेन्द्रदेव कथित श्रामण्य का अंतरंगलिंग है, जो कि मोक्ष का कारण है।

जैसा कि गाथा में कहा है कि श्रामण्य के दो लिंग हैं ह्न एक का नाम बहिरंगलिंग है और दूसरे का नाम अंतरंगलिंग है; जिन्हें हम द्रव्यलिंग एवं भावलिंग भी कहते हैं।

द्रव्यलिंग और भावलिंग के संबंध में हमारी बहुत गलत धारणाएँ हैं। 'द्रव्यलिंग' शब्द सुनते ही हमें ऐसा लगने लगता है जैसे मुँह में कड़वाहट सी आ गई हो। द्रव्यलिंग हमें बिल्कुल हेय लगता है और भावलिंग साक्षात् मोक्षस्वरूप ही प्रतीत होता है; लेकिन हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि कोई भी व्यक्ति द्रव्यलिंग और भावलिंग ह्न दोनों के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर सकता।

सिद्धचक्रमहामण्डलविधान की जयमाला में भी कहा है ह्न

भावलिंग बिन कर्म खिपाई, द्रव्यलिंग बिन मुनि शिवपद जाई।
यो अयोग कारज नहीं होई, तुम गुण कथन कठिन है सोई ।।

द्रव्यलिंग के बिना कोई मोक्ष चला जाय और भावलिंग के बिना कर्मों का नाश हो जाय ह्न ये सब असंभव कार्य हैं।

जब मोक्ष के लिए दोनों ही अनिवार्य हैं, तब एक बुरा और दूसरा अच्छा ह्न यह कैसे हो सकता है ?

अब यदि कोई कहे कि शास्त्रों में तो द्रव्यलिंगी मुनियों की बहुत निंदा की गई है।

भाई ! जहाँ द्रव्यलिंगी मुनियों की निंदा आती है, वह भावलिंग के बिना जो द्रव्यलिंग है, उसकी निंदा है; भावलिंग के साथ जो द्रव्यलिंग है, उसकी निंदा नहीं। वस्तुत: द्रव्यलिंग और भावलिंग तो साथ-साथ ही होते हैं।

यहाँ यह प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि जिसप्रकार भावलिंग के बिना होनेवाले द्रव्यलिंग की निंदा होती है; उसीप्रकार द्रव्यलिंग के बिना भावलिंग की भी निंदा होनी चाहिए; परन्तु ऐसा नहीं होता।

इसका उत्तर यह है कि द्रव्यलिंग के बिना भावलिंग होता ही नहीं है; पर द्रव्यलिंग भावलिंग के बिना हो जाता है। जब हम किसी को भावलिंगी कहते हैं, तब उसका अर्थ यह है कि वह भावलिंगी तो है ही, द्रव्यलिंगी भी है। यही कारण है कि शास्त्रों में भावलिंग की निंदा नहीं है।

इस संबंध में दूसरा विवेचनीय बिन्दु यह है कि द्रव्यलिंग बाह्यक्रिया का नाम है और श्रामण्य के लिए उसका होना भी अनिवार्य है। शरीर की नग्नता आदि क्रिया संबंधी भाव है, शुभभाव हैं और भावलिंग शुद्धोपयोगरूप है, शुद्धपरिणतिरूप है। यद्यपि द्रव्यलिंग के बिना मोक्ष नहीं होगा, तथापि द्रव्यलिंग से भी मोक्ष नहीं होगा; क्योंकि द्रव्यलिंग तो जड़ की क्रिया और शुभभावरूप है और मोक्ष जड़ की क्रिया और शुभभावों से नहीं होता।

गाथा २०५ में द्रव्यलिंग का जो स्वरूप कहा है, उसमें जो 'यथाजातरूप' कहा है; उसका तात्पर्य यह है कि जैसा माँ के पेट से जन्म लिया था, वैसा ही रूप। उस रूप के साथ एक लंगोट भी नहीं रख सकते तथा 'सिर और दाढ़ी-मूँछ के बालों का लोंच किया हुआ' होना चाहिए अर्थात् अपने केश अपने ही हाथ से उखाड़ने होंगे।

उन केशों को नाई से बनवाने में क्या दिक्कत है ?

अरे भाई ! यदि नाई से केश बनवाएंगे तो फिर उसके लिए पैसों की आवश्यकता होगी और पुन: सांसारिक चक्र प्रारम्भ हो जावेगा। नाई से केश बनवाना कोई स्वाधीन क्रिया नहीं है और उसमें शृंगार का भाव भी हो सकता है।

इन गाथाओं के बाद फिर वे गाथाएँ आती हैं, जिनमें यह बताया गया है कि गुरु दो प्रकार के होते हैं ह्न एक तो दीक्षागुरु और दूसरे निर्यापक गुरु अर्थात् आचार्य और निर्यापक आचार्य।

आचार्य तो वे हैं जो दीक्षा देते हैं और निर्यापक आचार्यों को हम इसप्रकार समझ सकते हैं कि जैसे किसी आचार्य ने 1000 शिष्यों को दीक्षा दी; लेकिन उन सभी की गल्तियाँ आदि देखने का समय उन आचार्यदेव के पास न हो, तब वे अपने ही सहयोगी अन्य मुनियों को यह जिम्मेदारी दे देते हैं कि यदि किसी मुनिराज से गलती हो जाय, तो तुम उन्हें प्रायश्चित विधि से शुद्ध करना। ऐसे काम निपटाने वाले अर्थात् निभाने वाले आचार्य निर्यापक आचार्य कहलाते हैं।

इसी बात को गाथा 210 की टीका में इसप्रकार स्पष्ट किया है ह्न

''जो आचार्य लिंगग्रहण के समय निर्विकल्प सामायिक संयम के प्रतिपादक होने से प्रव्रज्यादायक हैं, वे गुरु हैं; और तत्पश्चात् तत्काल ही जो (आचार्य) सविकल्प छेदोपस्थापनासंयम के प्रतिपादक होने से छेद के प्रति उपस्थापक (भेद में स्थापित करनेवाले) हैं, वे निर्यापक हैं; उसीप्रकार जो (आचार्य) छिन्न संयम के प्रतिसंधान की विधि के प्रतिपादक होने से 'छेद होने पर उपस्थापक (संयम में छेद होने पर उसमें पुन: स्थापित करने वाले)' हैं, वे भी निर्यापक ही हैं।''

'छेदोपस्थापक पर भी होते हैं' का तात्पर्य यह है कि दीक्षा देनेवाले

आचार्यों के अलावा दूसरे भी होते हैं। चाहे जैसे लोग दीक्षा न ले लें; इसलिए आचार्य ही पूरी परख करके दीक्षा देते हैं। इससे एक तो अपात्र जीव दीक्षा नहीं ले पावेंगे और नियन्त्रण भी रहेगा। जिन्होंने दीक्षा ले ली है, वे अनभ्यस्त हैं; अत: उनको निर्यापक आचार्यों की देखरेख में क्रियाओं में निष्णात कर दिया जाता है। इसप्रकार यहाँ पर आचार्यदेव ने सारी प्रक्रिया का वर्णन किया है।

इसके बाद इसी संबंध में गाथा 211-212 की टीका भी द्रष्टव्य हैह्न

''संयम का छेद दो प्रकार का है ह्न बहिरंग और अन्तरंग। उसमें मात्र कायचेष्टा संबंधी बहिरंग छेद है और उपयोग संबंधी छेद अन्तरंग छेद है। यदि भलीभाँति उपयुक्त श्रमण के प्रयत्नकृत कायचेष्टा का कथंचित् बहिरंग छेद होता है, तो वह अन्तरंग छेद से सर्वथा रहित है; इसलिए आलोचनापूर्वक क्रिया से ही उसका प्रतीकार (इलाज) होता है; किन्तु यदि वही श्रमण उपयोग संबंधी छेद होने से साक्षात् छेद में ही उपयुक्त होता है तो जिनोक्त व्यवहारविधि में कुशल श्रमण के आश्रय से, आलोचनापूर्वक, उनके द्वारा उपदिष्ट अनुष्ठान द्वारा संयम का प्रतिसंधान होता है।''

जिसप्रकार विद्यार्थियों की कई गल्तियाँ तो ऐसी होती हैं कि उनके लिए डाँट-फटकार ही पर्याप्त है; कुछ गल्तियों के लिए दंड भी दिया जाता है; कुछ गल्तियों के लिए उन्हें संस्था से बाहर भी निकाला जा सकता है और पुन: भर्ती के लिए प्रवेश की पूरी प्रक्रिया से गुजरना पड़े तथा कुछ गल्तियाँ ऐसी भी होती हैं कि यदि एक बार निकाल दिया तो दुबारा भर्ती ही नहीं हो।

उसीप्रकार मुनिराजों में भी इसीप्रकार की गल्तियाँ होती हैं कि माफी माँगी और काम चल गया। कुछ गल्तियाँ ऐसी होती है कि सुधार के लिए तीन दिन का उपवास करने के लिए कह दिया जाय, उससे प्रायश्चित्त हो जाएगा, कुछ गल्तियों के लिए मुनिराजों की दीक्षा ही छेद दी जाती है और बाद में पुन: पूरी प्रक्रिया पूर्वक दीक्षा दे दी जाती है एवं कुछ गल्तियाँ ऐसी होती हैं कि संघ से ही निकाल दिया जाता है और पुन: नहीं लिया जाता है।

कायचेष्टा संबंधी बहिरंग छेद में आलोचना पूर्वक क्रिया से ही उसका प्रतिकार हो जाता है अर्थात् अंतरंग में तो छेद है नहीं और काया से गलती हो जाय तो अपनी आलोचना से उसका प्रतिकार हो जाता है।

विद्यार्थियों में कोई कक्षा में लेट आता है और वह यह कहता है कि मैं कल से समय पर आऊँगा तो उसको माफ कर दिया जाता है; लेकिन किसी अन्य विद्यार्थी की गलती इतनी ज्यादा होती है कि उसे कक्षा के समय बेन्च पर खड़े रहने के लिए कह दिया जाता है। जिसप्रकार विद्यार्थियों में भी दण्ड में भेद हैं; उसीप्रकार मुनिराजों में विभिन्न प्रकार से प्रायश्चित्त होता है।

अरे भाई ! कभी-कभी तो प्रायश्चित्त के लिए मुनिराजों को भी खड़ा कर दिया जाता है। अकंपनाचार्य ने श्रुतसागर को उस स्थान पर रात भर खड़े रहने के लिए कहा; जहाँ उन पर आक्रमण होने की सम्भावना थी। मैं अपने विद्यार्थियों से कहता हूँ कि तुम लोगों को तो ५-१० मिनिट के लिए खड़ा किया जाता है, श्रुतसागर को तो रात भर खड़े रहने के लिए कहा गया था। अरे भाई ! मुनियों को भी अनुशासन में रहना पड़ता है। उन श्रुतसागर की क्या गलती थी ? वे सिनेमा देखने थोड़े ही चले गये थे, उन्होंने किसी के साथ मार-पीट थोड़े ही की थी; उन्होंने तो मात्र मंत्रियों के साथ तत्त्वचर्चा की थी। उनकी गलती यह थी कि उन्होंने रास्ते में खड़े-खड़े विधर्मियों से चर्चा की थी।

उन्होंने तत्वचर्चा राह चलते की थी। तत्त्वचर्चा एक जगह बैठकर शांति से करने की चीज है न कि राह चलते। दूसरी बात यह है कि तत्त्वचर्चा चाहे जिससे करने की चीज नहीं है।

मैं छात्रों से कहता हूँ कि जब तुम लोगों को ऐसा लगे कि हमें बहुत कठोर दण्ड दिया गया है; तब श्रुतसागरजी की घटना को याद कर लेना। तब वह दण्ड बहुत हल्का-फुलका लगने लगेगा।

शास्त्री अंतिम वर्ष के विद्यार्थी सोचते हैं कि हम 'शास्त्री' हो गए हैं और हमें इतना बड़ा दण्ड दे दिया गया।

अरे भाई ! श्रुतसागर मुनिराज का नाम श्रुतसागर नहीं; अपितु श्रुतसागर तो उनकी उपाधि थी। उनकी इतनी सामर्थ्य थी कि अवधिज्ञान से किसी का भी राह चलते पूर्व भव जान ले, वे कोई साधारण मुनिराज नहीं थे। जब श्रुत के सागर पर अनुशासनात्मक कार्यवाही हो सकती है तो शास्त्री तृतीय वर्ष के विद्यार्थियों पर क्यों नहीं हो सकती। यह विचार कर उसे स्वीकार भी करना चाहिए।

इसप्रकार श्रमण के कायिक चेष्टा से जो गल्तियाँ हो जाती हैं; उनका प्रायश्चित्त आलोचना और प्रतिक्रमण से हो जाता है; लेकिन यदि भाव से गलती होती है तो आचार्य के समक्ष स्वयं मुनिराज अपना अपराध बताते हैं और आचार्य प्रायाश्चित देकर शुद्धि करते हैं। इसप्रकार इन सारी विधियों का वर्णन यहाँ पर किया गया है।

तदनन्तर गाथा २१५ का भावार्थ भी द्रष्टव्य है ह्न

''आगमविरुद्ध आहार-विहारादि तो मुनिराज ने पहले ही छोड़ दिये हैं। अब संयम साधने की बुद्धि से मुनिराज के जो आगमोक्त आहार, अनशन, गुफादि में निवास, विहार, देहमात्र परिग्रह, अन्य मुनियों का परिचय और धार्मिक चर्चा-वार्त्ता पाये जाते हैं; उनके प्रति भी रागादि करना योग्य नहीं है, उनके विकल्पों से भी मन को रंगने देना योग्य नहीं है; इसप्रकार आगमोक्त आहार-विहारादि में भी प्रतिबंध प्राप्त करना योग्य नहीं है; क्योंकि उससे संयम में छेद होता है।''

देखो ! भावार्थ में कितने स्पष्ट एवं साफ शब्दों में लिखा है कि निर्दोष आहार, अनशन, गुफादि में निवास, विहार, देहमात्र परिग्रह, अन्य मुनियों का परिचय, धार्मिक चर्चा-वार्ता - इनमें राग रखना अच्छी बात नहीं है, इनके विकल्पों से भी मन को रंगने देना योग्य नहीं है। अरे भाई ! मुनिराजों को तत्त्वचर्चा का भी रंग नहीं लगना चाहिए। तत्त्वचर्चा के नाम पर प्रतिदिन घंटों गपशप लगाते रहना भी अच्छी बात नहीं है।

भावार्थ में जो यह लिखा है कि 'आहार-विहारादि में भी प्रतिबंध प्राप्त करना योग्य नहीं है', इसमें प्रतिबंध प्राप्त करने का तात्पर्य प्रतिबंधित होना है। यदि तत्त्वचर्चा के लिए 2 बजे से 3 बजे तक का समय निश्चित कर दिया, उस समय फिर दूसरी जगह जाने का विकल्प आ गया तो लोग कहेंगे कि महाराजजी ने समय दिया था और उस समय पर महाराजश्री ने तत्त्वचर्चा नहीं की, इसलिए मुनिराज इन सब के लिए अपने को प्रतिबंधित नहीं करते हैं; क्योंकि उससे संयम में छेद होता है। **(क्रमश:)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

थक के बैठ न जाना चेतन.....

(दिनांक 16 जुलाई, 06 को कीर्तिस्तम्भजी की नसियाँ में सम्पन्न हुए परिचय सम्मेलन में अर्पित जैन बड़ामलहरा द्वारा नवीन छात्रों के लिए लिखित कविता..)

थक के बैठ न जाना चेतन, भले तुझे अभी हार मिलेगी,
देखो जीत खडी है आगे, ऐसी ये सौगात मिलेगी।
हो अबाध मुक्ति मार्ग पर गुरुदेव के लघुनन्दन,
उन चैतन्य चितेरों का करते शत शत अभिनन्दन।।१।।
चार दिशा गूंज उठे ऐसा हुन्कार सभी करना,
पथ कन्टक होने पर उन पर आगे बढने से ना डरना।
तपो परीक्षा की अग्नि में बनो कुन्दकुन्द के कुन्दन,
उन चैतन्य चितेरों का करते शत शत अभिनन्दन।।२।।
अभी आपके मन के पंछी खूब उडेंगे घर-घर को,
वो घर तो बेघर हो जाना आना होगा निज घर का।
गुरुजनों की सेवा कर बनना उनके अक्षांजन,
उन चैतन्य चितेरों का करते शत शत अभिनन्दन।।३।।
जिनवाणी के रक्षक हो तुम उसको शिरोधार्य करना,
गूढ गूढ सिद्धांतों को अच्छे से मन में तुम धरना।
आत्मज्ञान की अलख जगाकर होना नित्य निरंजन,
उन चैतन्य चितेरों का करते शत शत अभिनन्दन।।४।।

वैराग्य समाचार

1. प्रसिद्ध प्रवचनकार पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जैन जबलपुर की माताजी श्रीमती छोटीबाई जैन का 14 जुलाई, 2006 को 82 वर्ष की उम्र में शांतपरिणामों के साथ देहावसान हो गया है। आप गहन स्वाध्यायी होने के साथ-साथ निरन्तर तत्त्व-चिंतन, मनन में संलग्न रहती थी।

2. श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर के स्नातक पण्डित अनिलकुमारजी 'धवल' भोपाल के पिता श्री रखबलालजी जैन का दिनांक 13 जुलाई 06 को देहावसान हो गया है। आप सरल स्वभावी एवं स्वाध्यायी पुरुष थे।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हो ह्न यही मंगल भावना है।

पटाखा विरोधी पोस्टर मँगाये

आचार्य कुन्दकुन्द सर्वोदय फाउण्डेशन (रजि.) जबलपुर द्वारा दीपावली पर्व पर होनेवाली भयंकर हिंसा व अन्यहानियों से जागरूक करने हेतु प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी रंगीन पोस्टर प्रकाशित किया जा रहा है।

अहिंसा अभियान के अन्तर्गत प्रकाशित होनेवाले इस पोस्टर (मूल्य:4/- प्रति) को सम्पूर्ण देश में प्रेषित किया जायेगा। जो मण्डल अथवा व्यक्ति इसे अधिक संख्या में प्राप्त करना चाहते हैं, वे अपना आर्डर निम्न पते पर शीघ्र भेजें।

ह्न विराग शास्त्री, 702 जैन टेलिकॉम सेन्टर, फूटाताल, जबलपुर (म.प्र.)

अवश्य लाभ लें

रात्रि 10.20 पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों को देखना न भूलें। प्रवचन प्रसारण में कोई समस्या हो तो श्री पीयूषकुमारजी शास्त्री से 09414717829 पर सम्पर्क करें।

परिचय सम्मेलन एवं गोष्ठी सम्पन्न

जयपुर (राज.) : श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय में अध्ययनरत शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों द्वारा आगन्तुक नवीन छात्रों का परिचय सम्मेलन रविवार दिनांक 16 जुलाई, 2006 को श्री विमलनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, कीर्तिस्तम्भजी की नसियाँ, आमेर-जयपुर में सानन्द सम्पन्न हुआ।

सम्मेलन की अध्यक्षता महाविद्यालय के प्राचार्य पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने की। मुख्य अतिथि के रूप में ब्र. यशपालजी जैन एवं श्रीमती कमलाजी भारिल्ल उपस्थित थे। इनके अतिरिक्त अध्यापकगणों में पण्डित पीयूषजी शास्त्री, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री, पण्डित जितेन्द्रजी राठी तथा बाहर से पधारे हुए महानुभावों में श्री रमेशचन्दजी शास्त्री जयपुर, श्री महेन्द्रजी पाटनी, श्री बलभद्रजी जैन-आदर्शनगर एवं श्री दुलीचन्दजी जैन खैरागढ़ मंचासीन थे।

सम्मेलन में उपाध्याय कनिष्ठ, वरिष्ठ, शास्त्री एवं आचार्य कक्षाओं के विद्यार्थियों का परिचय कराया गया।

इस अवसर पर अध्यक्षीय उद्‌बोधन में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने गुरु-शिष्य के सम्बन्धों पर प्रकाश डाला। साथ ही ब्र. यशपालजी जैन, श्रीमती कमलाजी भारिल्ल, श्री दुलीचन्दजी जैन का भी छात्रों के हितार्थ मार्मिक उद्‌बोधन प्राप्त हुआ। मंदिरजी का परिचय श्री महेन्द्रजी पाटनी ने दिया।

समारोह का मंगलाचरण अनुराग जैन एवं मुख्य संचालन रोहन रोटे व अंकुर जैन ने किया। अन्त में आभार प्रदर्शन पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री ने किया।

इसी के साथ रविवारीय गोष्ठीयों की शृंखला में तृतीय गोष्ठी दि.17 जुलाई, 2006 को **चार अनुयोग : एक विश्लेषण** विषय पर आयोजित हुई; जिसकी अध्यक्षता पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर ने की।

गोष्ठी में प्रथम स्थान उपाध्याय वर्ग से सुनय मादृप एवं शास्त्री वर्ग से अंकुर जैन ने प्राप्त किया। संचालन अंकित जैन व मंगलाचरण सुदीप जैन ने किया। **ह्न संयोजक, रोहन रोटे एवं अंकुर जैन**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) अगस्त (प्रथम) 2006
RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए.जैनविद्या व धर्मदर्शन तथा इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127